International Journal of Advanced Research and Development
ISSN: 2455-4030
Impact Factor: RJIF 5.24
www.advancedjournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2018; Page No. 936-939

प्राचीन भारत में नारियों की सामाजिक एवं राजनीतिक स्थिति : एक विश्लेषण

डॉ0 रजनीश राय
समाजकार्य एवं मानव विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

सभ्यता के सृजन के दो शिल्पी क्रमशः स्त्री और पुरूष, एक के अभाव में दूसरा अधूरा है। दोनों के परस्पर व्यापी सम्बन्धों से ही जीवन को गतिशीलता मिलती है। गति ही प्रगति का मूल है। अतः नैसर्गिक रूप से समाज के सर्वांगीण विकास में नारी की भूमिका को अस्वीकार करना सत्य से मुँह मोड़ने के अलावा दूसरा कुछ नहीं कहा जा सकता। चाहे प्राचीन भारत हो अथवा अर्वाचीन भारत।

इस दृष्टि से प्राचीन भारत में नारी की सामाजिक एवं राजनीतिक गतिविधियों की विवेचना करना अत्यन्त समीचीन प्रतीत होता है। किसी भी मानवीय सभ्यता की परिकल्पना नारी के बिना अधूरी होगी या दूसरे शब्दों में यह कहना असंगत न होगा कि नारी को अभिकेन्द्र से बहिष्कृत करके सभ्यता की परिकल्पना कदापि नहीं की जा सकती। सृष्टि निर्माता ने सृष्टि की रचना के लिए स्त्री एवं पुरूष को एक दूसरे के परिपूरक बनाया इसी के निमित्त प्रकृति ने स्त्री एवं पुरूष के दो भिन्न–भिन्न रूपों का निर्माण किया इन्हीं परस्पर विरोधी गुणों एवं स्वभाव वाले भिन्न–भिन्न प्राकृति के गुणों वाले लोगों का मिलन ही इस सृष्टि का आधार है। नर में कर्म की प्रधानता रहती है तो नारी में भाव पक्ष की प्रधानता होती है। पुरूष कठोरता, सक्रियता, शक्ति एवं शौर्य का प्रतिक है तो नारी कोमलता, मधुरता सुकुमारता की साक्षात प्रतिमा है। पुरूष समाज के न्याय भावना का प्रतीक है तो नारी दयाभावना की। पुरूष का कर्तव्य शुष्क है तो दूसरी ओर स्त्री का स्वभाव सरस है। पुरूष यदि बल का प्रतीक है तो स्त्री हृदय की प्रेरणा है। पुरूष का जीवन संघर्ष से प्रारम्भ होता है तो नारी का जीवन आत्म–समर्पण से प्रारभ्भ होता है।

इसी को दृष्टिपथ में रखकर तथा इसके अद्भुत गुणों के कारण भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति में नारी का अत्यन्त गरिमापूर्ण स्थान है। अर्द्ध–नारीश्वर की परिकल्पना ही नारियों की महत्ता को पूर्णतया प्रगट करती है। वस्तुतः नारी के बिना नर अपूर्ण है तथा नर के बिना नारी अपूर्ण है दोनों एक ही सिक्के के दो पहलू तथा एक दूसरे के पूरक हैं। सभ्यता एवं संस्कृति के उत्कर्ष में नारियों ने क्रियात्मक योग दिया है। यह पूर्णतया सत्य है कि नारी के लोरी गाने वाले कोमल स्वरों में राष्ट्र–नायकों को कर्तव्य–निर्देश देने की अद्भूत क्षमता हैं उसके पालना झूलाने वाले कोमल करों में विश्व पर शासन करने की अपूर्व शक्ति है। देश एवं राष्ट्र का उत्थान एवं उत्कर्ष नारियों पर ही निर्भर है। एक आत्मपूर्ण गौरवमयी माता ही शिशु में कर्तव्यपालन आत्मसम्मान एवं उत्सर्ग की भावना का समावेश कर सकती है। नारी के माँ एवं जननी रूप को विश्व के सभी राष्ट्रों ने सभी समाजों ने मान्यता प्रदान की। नारी ही किसी देश सभ्यता की मूल्यांकन का वास्तविक व मान्य मापदंड है।

भारतीय संस्कृति में स्त्री को न तो पुरूष की अनुगामिनी माना गया है, और न ही उसके समकक्ष, वरन् वह तो पुरूष की पूरक है। स्त्री एवं पुरूष दोनों ही जीवन की एक महत्वपूर्ण इकाई है। किन्तु पुरूष की पूरक होने पर भी नर की जन्मदात्री शक्ति होने से स्त्री को पुरूष की तुलना में श्रेष्ठ माना गया है। शक्ति के अभाव में ब्रह्म, विष्णु एवं महेश जैसे सर्व शक्तिमान देव भी निरूपाय से प्रतीत होते हैं। साधारण मानवों की तो कोई बात ही नहीं है। नारी की इन्हीं चरित्रगत विशेषताओं के कारण ही प्राचीन भारतीय दण्ड–नीति के मुख्य ज्ञाता महर्षि मनु ने कहा था कि– 'यत्र नार्यस्तु पुजयन्ते रमन्ते तत्र देवता, किन्तु यह दुःख की बात है कि प्राचीन काल में नारी इतनी श्रद्धा एवं आदर की पात्र थी कालान्तर में वही नारी पुरूष वर्ग के इशारे पर नाचने वाली काठ की पुतली के समान हो गयी। उसका स्वयं का अस्तित्व घने अंधकार में विलीन हो गया।

किन्तु आधुनिक युग में प्रजातंत्र की स्थापना के फलस्वरूप स्वतंत्रता, समानता तथा विश्व बन्धुत्व एवं न्याय इत्यादि विषयों पर अत्यधिक बल प्रदान किया गया। प्रायः विश्व के सभी देशों की नारियों ने प्रजातंत्र की इस आधुनिक भावना का दर्शन करते हुए स्वयं की अपनी एक स्वतंत्र सत्ता का अनुमान एवं अंधविश्वास रूपी लौह–श्रृखलाओं को भरसक तोड़ने का प्रयास किया। नारी में एक नवीन चेतना का उदय हुआ जिसे नारी जागरण कहा गया है।

इस आन्दोलन ने विश्व–व्यापी रूप धारण कर लिया तो भला भारत की नारी कैसे अछूती रह सकती थी उसने भी प्राचीन रूढ़ियों एवं मान्यताओं को परिवर्तित करते हुए अपनी मुक्ति के लिए सतत् प्रयत्न प्रारम्भ कर दिया है। उनके इस कार्य में यहाँ के पुरूष–वर्ग, विशेष रूप से समाज सुधारकों का भी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। आधुनिक काल में नारियों को पुरूष के समान ही अधिकार प्रदान किये गये है। संविधान में भी नारी एवं पुरूषों की स्थिति समान है। संविधान में दोनों को ही समान माना गया है। जाति एवं लिंग के आधार पर महिलाओं एवं पुरूषों में कोई भी अंतर नहीं किया गया है। नारी में आत्म स्वावलम्बन एवं आत्म सम्मान की भावना कूट–कूट कर भरी हुई है। आज भी नारी अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति जागरूक एवं सतर्क है, तथा जीवन के पथ पर वह अपने सर्वांगीण विकास के लिए निरंतर प्रयत्नशील है।

भारतवर्ष में मानव की उत्पत्ति से लेकर वैदिक युग तक के काल को प्राग्ऐतिहासिक काल के नाम से जाना जाता है। इस काल में भारतीय संस्कृति का सूत्रपात हुआ। यह युग भारतीय सभ्यता का ऊषा काल कहा जा सकता है। क्योंकि सिन्धु घाटी में प्राप्त अवशेषों से तत्कालीन सभ्यता में मानव की प्रगति एवं विकास का ज्ञान प्राप्त होता है। इस काल के बारे में ठीक–ठीक जानकारी प्राप्त करना एक दुष्कर कार्य है क्योंकि अतीत अनादि है। उसका अधिकतर भाग अज्ञात है किन्तु उस काल के प्राप्त चिन्हों, अवशेषों व भित्तिचित्रों से ज्ञात होता है कि उस काल में मातृ सत्तात्मक समाज था उस आदि युग में माता ही समस्त सत्ता व शक्ति का केन्द्र थी। समाज में माता की वह आदर्श अधिकार ईश्वरीय सत्ता से अनुप्राणित मानव ने नारी में अदृश्य शक्ति की कल्पना कर माता की प्रतिमा की प्रतिस्थापना की।[1]

यह तो स्पष्ट है कि नारी की स्थिति पुरूष के समान ही नहीं थी आपितु उसको धार्मिक एवं सामाजिक जीवन में विशेषाधिकार उपलब्ध थे। समाज में वंश माता के नाम से चलता था। पारिवारिक संगठन के सिद्धान्त व व्यवहार में स्त्रियों का स्थान बहुत ऊँचा था, किसी प्रकार का पर्दा नहीं था। साधारण जीवन के आलावा समाज का सामाजिक व धार्मिक नेतृत्व में भी स्त्रियों का हाथ था।

ऋग्वैदिक काल मनुष्य का उच्चकोटि की सभ्यता को प्रगट करता है। वास्वत में यह युग भारतीय नारियों के लिए स्वर्णयुग था। उस युग में नारियों को जितनी श्रद्धा एवं आदर प्राप्त हुआ उतनी श्रद्धा तो तत्कालीन विश्व की अन्य जातियों की नारियों को भी प्राप्त नहीं थी और न ही आज तक किसी भी नारी जाति को प्राप्त हो सकी है। ऋग्वेद में नारियों को देवी कहा गया है। इस काल में समाज पितृ–सत्तात्मक होते हुए भी नारी के प्रति उदार दृष्टिकोण से पूर्ण था। पुत्र एवं पुत्री समान रूप से प्रिय थे। स्त्रियों को पर्याप्त मात्रा में आर्थिक स्वतंत्रता एवं पुरूषों के साथ समता प्राप्त थी। ऋग्वेद में वर्णित है कि समाज में अपने अधिकारों एवं सुविधाओं के विषय में शिक्षा एवं प्रशिक्षण विद्वता एवं धार्मिक उत्सवों में भाग लेने के सन्दर्भ में महिलाएँ पुरूषों के समकक्ष थीं। ऋग्वेद में सूक्त है कि जिसकी व्याख्या 'उन महिला ऋषियों अथवा ब्रह्मवादिनियों ने की थी जिन्होंने शैक्षिक अनुशासन एवं ब्रम्हचर्य का पालन किया था।

ए.एस. अल्टेकर के अनुसार वैदिक युग में समाज के उच्च वर्गो में लड़कियों की पवित्र दीक्षा (उपनयन) समान थी, वे शिक्षा में नियत पाठ्यक्रम पूरा करती थीं कुछ धर्मशास्त्र व दर्शनशास्त्र के क्षेत्र में विशिटटता प्राप्त करती थी तथा पर्याप्त मात्रा में महिलायें इस वृत्तिका को अपनाती थी।

वैदिक युग में विवाह की प्रथा न केवल स्थापित हो सकी थी वरन् उसे सामाजिक एवं धार्मिक कर्तव्यों तथा आवश्यक आवश्यकता के रूप में ग्रहण किया गया था। नारी अपने पति के साथ धार्मिक कृत्यों में समान रूप से भाग लेती थी दोनों को ही समान अर्थिक अधिकार प्राप्त थे। पति एवं पत्नी को सम्मिलित रूप से दम्पत्ति कहा जाता था जो कि पति–पत्नी समान महत्व को व्यक्त करता है, उस समय नारी को अपना जीवनसाथी चुनने की पूर्ण स्वतंत्रता थी। वह अपनी इच्छानुसार प्रेम–विवाह कर सकती थीं। विधवा भी पुनर्विवाह कर सकती थी। सम्बन्ध विच्छेद व नियोग प्रथा प्रचलित थी। सभा, विद्थ व ग्राम्य जीवन के अन्य समारोहों आदि के अतिरिक्त बसन्त ऋतु में समान नामक उत्सव में भाग ले सकती थी। इस उत्सव में महिलाये सज–धज कर जाती थीं एवं नृत्य क्रिणांगन में भाग लेती थी। इन समस्त उत्सवों में प्रायः वर एवं वधू का चयन किया जाता था। कुछ लड़कियाँ आजीवन अविवाहित रहती थी जिन्हें अमाजू कहा जाता था।

वैदिक संस्कृति में स्त्रियां गृह कार्य के साथ–साथ पुरूषों के ही समान उच्च शिक्षा प्राप्त करती थी वेद एवं शास्त्र में पारंगत होने के साथ–साथ ऋचाओं की रचना भी करती थी। विश्ववारा, घोषा, लोपामुद्रा, शारन्धी इत्यादि उस काल की प्रतिभाशाली मन्त्रद्रष्टा विदुषी थीं। शुल्मा, मैत्रेयी, वाक्, प्राचीतेई व गार्गी मन्त्रों की रचनाकार थी। वैदिक युग की प्रमुख समिति विदथ मानी जाती है इसका वर्णन ऋग्वेद में 111 बार एवं अथर्ववेद में 22 बार हुआ है में नारियों का प्रवेश सुलभ था। विद्थ में नारी न केवल प्रवेश ही करती थी वरन् उसकी प्रक्रिया में तथा वाद विवाद में भाग लेती थी। घोषा का विद्थ में जाते हुए वर्णन किया गया हैं। उस समय विवाह के अवसर पर यही कामना की जाती थी कि पुत्री विद्थ में बोल सके। उस काल में अनुलोम एवं विलोम विवाह की दोनों विधियां प्रचलित थीं। ऋग्वेद में इस प्रकार के विवाहों के अनेक उदाहरण प्राप्त होते हैं। च्यवन, श्यावशव, कांक्षीवान और विमद ब्राम्हण ऋषियों का विवाह राज परिवारों में हुआ था। प्रतिलोम विवाहों की संख्या अल्प थी इस समय प्रचलित विवाह की प्रथा के द्वारा कन्या अपने पिता के घर को त्यागकर श्वसुर के घर जाती थी तथा विवाह दोनों परिवारों की उपस्थिति में सम्पन्न होता था। वर एवं कन्या का गठबंधन होता था तथा पूजा एवं मंत्रों के साथ विवाह की प्रथा के द्वारा कन्या अपने पिता के घर को त्यागकर श्वसुर के घर में प्रस्थान करती थी। वर एवं वधू पवित्र प्रज्जवलित अग्नि के चारों ओर साथ–साथ सात बार प्रदक्षिणा करते थे जिन्हें सप्तपदी कहा जाता था। दहेज प्रथा प्रचलित थी कन्या पक्ष वाले वर पक्ष को अपनी सामर्थ्य के अनुसार दहेज प्रदान करते थे अपनी ससुराल में बधू अपने साथ–श्वसुर, देवर आदि सभी पर शासन करती हुई समादरणीय स्थान प्राप्त करती थी।

उस काल में नारी को अत्यधिक सम्मान एवं आदर की दृष्टि से देखा जाता था वह पति के इशारों पर नाचने वाली कठ पुतली न होकर सुख–दुख में उसकी सहभागिनी बनती थी। इन्द्र की पत्नी इन्द्राणी को भारतीय पत्नी का प्रतीक माना गया है। वह गृह की एक छत्र स्वामिनी, पति में शक्ति का संचरण करने वाली व हृदय की अधिष्ठात्री है।

इस काल में नारी धार्मिक कार्यो में पति की सहयोगी होती थी उसे अकेले भी उपासना करने का अधिकार प्राप्त था नारी अपने पति के साथ यज्ञ आदि कार्यो में भाग लेती थी यज्ञों में नारी को महत्वपूर्ण स्थान मिलता था। संध्या समय के मंत्रों के रागात्मक उच्चारण के अतिरिक्त वह चढ़ाये जाने वाले चावल को पिसती और बलि हेतु पशु को स्नान कराती थी।

स्त्रियां युद्ध की शिक्षा भी प्राप्त करती थीं। अगस्त्य के पुरोहित ऋषि की पत्नी विश्वाला अपने पति के साथ युद्ध में भाग लेने गयी थीं व मुद्गल ऋषि की पत्नी इन्द्रसेन शत्रुओं से युद्ध कर एक सहस्र गाय जीत कर लायी थी। दासानाउपी ने स्त्री सेना तैयार की थी और वृत्तासुर की माता ने दामुकाइन्द्र का, युद्ध में वध किया था।

इस काल में स्त्रियां अपने सौन्दर्य एवं श्रृंगार का ध्यान रखती थी। वे सुन्दर एवं उत्तम वस्त्र पहनती थी एवं आयुध माला, हार, वलय इत्यादि स्वर्ण आभूषणों को धारण करती थीं। वह अपने शरीर को व्यवस्थित रूप से ढ़क कर रखती थी इसके अतिरिक्त नारियां भेड़ की खाल के वस्त्र तथा सुनहरे वस्त्र भी पहनती थीं। साधारणतया नारियां अंतरीय (साड़ी) पहनती थी जो आधी पहनी व आधी ओढ़ी जाती थी। नृत्य के समय वह लहंगे जैसा जरी के काम का वस्त्र धारण करती थीं। जिसे परास कहा जाता था। इस युग में नारी के तीन रूपों गृहणी, सहचरी एवं माँ की महत्ता प्रदान की गयी थी। किन्तु उस समय का चरम विकास मातृत्व में स्थापित माना गया है। माता को अत्यधिक श्रद्धा एवं आदर की दृष्टि से देखा जाता था। माता के आशीर्वाद को जीवन में शौर्य एवं सौन्दर्य प्रदान करने वाला माना जाता था।

आर्यो एवं अनार्यो में निरन्तर संघर्ष होते रहने के कारण युद्ध में विजय प्राप्त करने के लिए माता का मुख्य कर्तव्य वीर पुत्रों को जन्म देना माना गया था। इस काल में स्त्रियों की स्थिति सम्मान जनक होने का एक कारण यह भी था कि उस काल में पुरूष युद्ध में संलग्न रहते थे। जिसके कारण नारियां गृहकार्य के साथ कृषि कार्य की देख–भाल करती थीं। इस समय सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था मुख्यता नारियों पर निर्भर होने के कारण ही समाज में इन्हे धार्मिक सामाजिक एवं राजनीतिक सभी क्षेत्रों में आदरणीय एवं सम्मान जनक स्थान प्राप्त था। वह सभी प्रकार के प्रतिबन्धों से मुक्त थी। इस प्रकार देखते हैं कि वैदिक युग में नारी को जो गरिमा व सुचिता प्रदान की गयी उतनी बाद में किसी भी काल में

प्रदान नहीं की गयी। इस युग में समाज के संचालन में उनका विशेष योगदान एवं क्रियात्मक सहयोग रहता था। वह इस समय की सामाजिक व्यवस्था का अतिविशिष्ट अंग थी। पति एवं पत्नी दोनों को ही समान माना गया था। स्त्री गृह में गृह–लक्ष्मी मानी जाती थी। उसे उसके चतुर्मुखी विकास के अवसर प्राप्त थे। पुत्र एवं पुत्री में कोई अन्तर नहीं था।

प्रायः देखने में ऐसा आता है कि समय परिवर्तन के साथ–साथ सभ्यता का उत्कर्ष भी होता है किन्तु नारी के सम्बन्ध में इसका विरोध रूप देखने को मिलता है। काल परिवर्तन के साथ नारी की स्थिति में उत्कर्ष होता गया। वर्ण–व्यवस्था के नियमों में कड़ाई के कारण स्त्रियों के क्रम में क्रमिक ह्यस होने लगा है। अन्तर–वर्ण विवाह प्रचलित थे। किन्तु उनसे उत्पन्न सन्तान निकृष्ट समझी जाती थी। अनुलोम विवाह प्रथा के कारण स्त्री का पद और भी हीन हो गया। वैराग्य की प्रवृत्ति के कारण स्त्रियों को अनादर की दृष्टि से देखा जाता था। ऋग्वेद के दशवें मण्डल में स्त्रियों की स्थिति में ह्यस के चिन्ह परिलक्षित होने लगे। ऐतरेय ब्राह्मण में नारी को शराब व जुआ के समान बताया गया। इस समय नारियों पर अनेक प्रकार के बन्धन लगाये गये थे। अतः इनको अपने वातावरण में स्वतंत्रता न मिल पाने के कारण नारी की सामाजिक क्रियाओं में भी सह भागिता कम हो गयी। तैत्तरीय संहिता में नारी की तुलना एक बुरे शुद्र से करते हुए उससे भी निम्न स्थान दिया गया है। उसी प्रकार सतपथ ब्राह्मण में भी नारी को एक बुरे आदमी से भी बुरा माना गया है। उत्तर वैदिक काल में नारियों को विवाह में आंशिक स्वतंत्रता प्राप्त होती थी इस तथ्य का प्रमाण प्राप्त होते हैं। लड़कियों का विवाह परिपक्व अवस्था में होता था। उस समय बहुविवाह का प्रचलन था तथा विधवा विवाह की मान्यता प्राप्त थी। स्त्री के पास धन का सर्वथा अभाव था। नारी के धार्मिक क्रियाओं में भाग लेने के अवसर कम होने लगे तथा उनके धार्मिक विशेषाधिकार भी घट गये थे। इस काल में स्त्रिया मुख्य रूप से कढ़ाई सिलाई एवं दस्तकारी आदि बनाने का कार्य करती थी।

ऐतरेय ब्राह्मण के एक पद में पुत्रों की प्राप्त को स्वर्गतुल्य एवं पुत्रियों को कृपणक (विपत्ति का कारण) माना गया है। इसमें पुनः कहा गया है पत्नी को अपनी पति का कभी भी उत्तर नहीं देना चाहिए। उत्तर–वैदिक युग में सभ्य परिवारों की स्त्रियों प्रातः एवं सायं को उपासना एवं प्रार्थना करती थी। किन्तु बलिदान के अनेक ऐसे कार्य स्त्रियों के हिस्से आता था। कालान्तर में समस्त धार्मिक कृत्य पुरूषों के हिस्से में आ गया था।

उपनिषदों के सन्दर्भ में हमेशा शिक्षा मिलती है कि इस काल में महान दार्शनिकों की सभा में अपने विद्धतापूर्ण भाषण के द्वारा सबको आश्चर्य चकित कर देने वाली गार्गी एवं ब्राह्म के ज्ञान का साक्षात्कार करने वाली मैत्रेयी के समान विदुषी नारियों के उदाहरण मिलते है। परन्तु इन गिनी चुनी नारियों को ही समाज में स्त्रियों की स्थिति का माप दण्ड नहीं मान सकते इसका कारण है कि समाज में ऐसी नारियों की संख्या अत्यन्त अल्प है।

वस्तुतः भारतीय नारी को अधोगति का प्रारम्भ इस युग में हो गया था। कालान्तर में तो उनकी स्थिति अत्यन्त सोचनीय होती चली गयी। महाकाव्यों के काल में नारी स्थिति के सम्बन्ध में विद्वानों में मतैक्य का अभाव है। इतना आवश्य माना गया है कि नारी का अधिकार इस काल में पहले की अपेक्षा कम हो गया है। नारी को पुरूष की सम्पत्ति समझा जाने लगा है। यज्ञ आदि कार्यो में उसकी उपस्थिति अब अनिवार्य नहीं रह गया था।[33]

बाल्मीकि कृत रामायण एवं महाभारत के द्वारा हमें इस युग की नारी स्थिति के बारे में परिज्ञान होता है। क्योंकि ये लौकिक संस्कृति की आदिम रचनाएं है। क्योंकि दोनों ही महाकाव्य मात्र महाकाव्य न होकर भारतीय संस्कृति, समाज, राजनीति तथा धर्म के सर्वांगीण आकार प्रदान करने वाला ग्रंथ है।[34]

महा कवि बाल्मीकि महाकाव्य रामायण एक नारी का, इस युग की आदर्श भूत महा नारी (सीता) का ही चरित्र चित्रण है। सीता को पति सम्मानिता नारी कहा गया है। सीता के उपस्थित न रहने पर राम को अश्वमेघ यज्ञ में उनकी स्वयं प्रतिमा रखनी पड़ी। वास्तव में सीता पति की दासी, साहधर्मिणी एवं पति पर अपना सर्वस्व अर्पण करने वाली एक आदर्श भारतीय नारी है। इस काव्य में सीता का शील, मर्यादा, भीरूता तथा पति का अनुगमन करने वाली एक नारी महर्षि बाल्मीकि की प्रतिभा का विलास है, पति व्रत धर्म का चर्मोत्कर्ष है तथा आर्य ललना की विशुद्धि का प्रतीक है।

इस काल में जननी की प्रतिष्ठा बनी हुयी थी। कन्या का विवाह रजस्वला होने से पूर्व कर दिया जाता था। विधवा विवाह प्रचलित न रहने से वैधव्य भी लांक्षित रहता था। बहुविवाह के प्रचनल के कारण नारियों की दशा और सोचनीय हो गयी थी। कश्यप ऋषि की आठ पत्नियां और दशरथ की तीन रानियों से यही ज्ञात होता है कि बहुविवाह का प्रचलन हो गया था।

सन्दर्भ

1. इवोल्यूशन आफ मदर वरशिप इन इण्डिया शशि भूषण दास गुप्ता (ग्रेट विमेन ऑफ इण्डिया में संग्रहीत 1953 कलकत्ता) पृष्ठ संख्या 49–50।
2. हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता–बेनी प्रसाद (पृष्ठ संख्या–50)।
3. बीमेन ऑफ इण्डिया : राधमुकुन्द मुखर्जी पृष्ठ संख्या 1।
4. पोजीशन ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइशेन–ए0एस0 अल्टेकर (पृष्ठ संख्या–410–411)
5. पोजीशन ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइशेन (ए0एस0 अल्टेकर) (पृष्ठ संख्या–31)
6. ऋग्वेद श्लोक 1/115/2।
7. वीमेन इन ऋग्वेद : भगवत शरण उपाध्याय पृष्ठ संख्या–92।
8. वीमेन इन वैदिक राज : शकुन्तला राव शास्त्री पृष्ठ 6।
9. ऋग्वेद 1/177/2।
10. सेशल लाइफ इन एन्शियन्ट इण्डिया, कल्चरल हेरिटेज ऑफ इण्डिया : हीरा चन्द चकलादार भाग 3 पृष्ठ 197।
11. पोजीशन ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन : ए0एस0 अल्टेकर पृष्ठ 12।
12. ऋग्वेद 1/671/3।
13. ऋग्वेद 1/85/26।
14. ऋग्वेद 10/85/86।
15. वीमेन इन ऋग्वेद भगवातशरण उपाध्याय (पृष्ठ संख्या–3) 1941 बनारस।
16. हिन्दू सीविलाइजेशन–राधाकुमुन्द मुखर्जी–1985 बम्बई पृष्ठ 40।
17. पोजीशन ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन : ए0एस0 अल्टेकर (पृष्ठ–239–234)।
18. ऋग्वेद 1/111, 101, 118/10/8, 102, 2/10, 102/2/19।
19. ऋग्वेद 84319।
20. ऋग्वेद 1, 40, 9–1, 162, 16–10, 5, 421, 1, 166,10–5, 6–10।
21. ऋग्वेद 1, 140, 9–10, 114, 3–2, 36।
22. वीमेन इन एन्शिएन्ट इण्डिया, सी0 वेन्डर लन्दन 1925 पृष्ठ 63।

23. हिन्दुस्तान की पुरानी सभ्यता : बेनी प्रसाद प्रयाग 1931 पृष्ठ संख्या 166।
24. ऐतरेय ब्राह्मण। 1–7।
25. तैत्तरीय उपनिषद 6, 5, 8, 2।
26. शतपथ ब्राह्मण 1, 3,1, 9।
27. हिन्दूस्तान की पुरानी सभ्यता : बेनी प्रसाद पृष्ठ संख्या–103 एवं पोजीशन ऑफ वीमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन, ए0एस0 अल्टेकर, पृष्ठ संख्या–411।
28. उपर्यक्त पृष्ठ संख्या 411।
29. हिन्दू सिविलाइजेशन राधा मुकुद मुखर्जी, पृष्ठ संख्या–97।
30. पोजीशन ऑफ वूमेन इन हिन्दू सिविलाइजेशन ए0एस0 अल्टेकर, पृष्ठ संख्या–14।
31. हिन्दू सिविलाइजेशन राधा मुकुन्द मुखर्जी पृष्ठ 141 एवं पोजीशन ऑफ वूमेन इन इण्डिया हिन्दू सिविलाइजेशन ए0एस0 अल्टेकर पृष्ठ संख्या–14।
32. दि कैम्ब्रिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया : ए0वी कीथ प्रथम भाग पृष्ठ संख्या–247।
33. भारतीय समाज का ऐतिहासिक विश्लेषन : भगवत शरण उपाध्याय, पृष्ठ संख्या–264।
34. सम आसपेक्ट्स आफ मुस्लिम एडमिस्ट्रेशन इन इण्डिया : राम प्रसाद त्रिपाठी, पृष्ठ संख्या–148।
35. समर्पण और साधना : (मध्य युग में नारी की स्थिति : नन्दिता मिश्र, पृष्ठ संख्या 108)
36. इण्डियन वूमेन थ्रू दि एसेज : पी थामस्, पृष्ठ संख्या–266।
37. लाईफ एण्ड कण्डिशन ऑफ पीपुल ऑफ हिन्दूस्तान : अशरफ, पृष्ठ संख्या–282।
38. सम कल्चर आसपेक्ट्स ऑफ मुस्लिम इन इण्डिया : राम प्रसाद त्रिपाठी, पृष्ठ संख्या–148।
39. समर्पण और साधना : (मध्य युग में नारी की स्थिति) : नन्दिता मिश्र, पृष्ठ संख्या–116।